THE TIMES OF INDIA

Date: 29-04-26

Woods & shoulds

Forest fires are getting worse in India. It's time to get serious about decarbonisation

TOI Editorials

Sunday and Monday were infernally hot. Indian cities took the top 95 positions for day temperatures. And the hills promised no respite. They were hot, too, and burning. Reports of forest fires from Uttarakhand and Tamil Nadu made Page 1 yesterday. Nothing unusual there – it's India's annual 12-week wildfire season after all. But satellite images showed 13,771 large fires across Indian forests by Monday, which is more than the average for past 15 summers. And it fits into a global trend of worsening wildfire seasons.

Across the world, forest fires are starting earlier and lasting longer, for three main reasons. One, rising temperatures, especially at night; two, less rain; three, early melting of snow. In India, the snow factor only applies to northern mountains, but the other two are experienced everywhere. For example, while our attention is riveted to fires in scenic Kumaon and Nilgiris, Gujarat and Bihar have had the most forest fires in the past four weeks.

Now, forest fires are "normal". They occurred before humans – friction caused by wind in dry weather, and lightning, caused massive fires. What's abnormal about today's fires is the warmer climate we have created, which makes starting and sustaining a fire easier. Studies show forest fires now burn twice as much tree cover as they did 20 years ago. And they add even more carbon dioxide to the atmosphere, making Earth toastier. While burning of fossil fuels releases 37bn tonnes of CO_2 annually, forest fires can add another 8bn tonnes, or 20% more. Plus, loss of trees reduces capacity to pull CO_2 out of the air. In 2024, the world lost 13.5mn hectares of forest cover – more than the area of Greece.

Long story short, to save forests, the world needs to reduce greenhouse gas emissions fast. That means, burning less fossil fuels. Easier said than done when temperatures and incomes are rising. ACs account for about 7% of India's power demand, when fewer than 10% of Indians use them. What will happen as AC and car ownership shoot up in the world's largest population? It depends on our will to decarbonise. On Saturday, when India's energy demand made a new record, solar energy met 22% of it. We have enough installed capacity to raise this to 50% or even 60%. But the planet won't cool in a day. We still have to fight forest fires with planning, community-based forest management, and remote sensing. There's no substitute for boots on the ground.

दैनिक भास्कर

Date: 29-04-26

मनुष्य की क्षमताएं सीमाओं का विस्तार करने लगी हैं

संपादकीय

विगत रविवार को केन्या के धावक सेबस्टियन सावे ने दुनिया को चौंकाते हुए लंदन में 1.59.30 घंटे में मैराथन की स्टैंडर्ड 42.195 किमी की दूरी हासिल की। खेल प्रेमियों की 'सब - 2' की वर्षों की साध पूरी हुई, जो मानव - क्षमता की नई परिभाषा थी। आसान समझ के लिए इस रिकॉर्ड का तुलनात्मक विश्लेषण बताता है कि सावे इतनी कम अवधि में इस लम्बी दूरी को तय करने में औसतन हर सेकंड 5.88 मीटर दौड़े, जबकि 100 मीटर स्प्रिंट के अब तक के सबसे तेज धावक उसेन बोल्ट ने वह छोटी-सी दूरी 10.438 मीटर प्रति सेकंड की औसत रफ्तार से पूरी की थी। यानी सावे की लगातार दो घंटे दौड़ने की रफ्तार बोल्ट की स्प्रिंट से आधी से ज्यादा रही। यह सफलता बताती है कि मानव की बौद्धिक ही नहीं शारीरिक क्षमताएं भी असीमित हैं। दार्शनिक कांट सहित कई विद्वानों ने मानव - क्षमता को सीमित बताया था। लेकिन हर वर्ष खेलों में रिकॉर्ड टूटना बताता है कि हर सीमा तोड़ी जा सकती है। सन् 1961 में वैज्ञानिक हेपलक ने जीव-विज्ञान का नया सिद्धांत प्रतिपादित करते हुए बताया था कि मानव सेल के विभाजित होने की एक तय सीमा है, जिसके बाद मृत्यु निश्चित है। जबकि बाद के वैज्ञानिकों ने पाया कि मानव जीवन काल अधिकतम 125 वर्ष का हो सकता है। कैंसर का सेल एक एंजाइम - टेलोमेरेस- पैदा करता है जो टेलोमेयर को पुनर्जीवित करता रहता है। कोई ताज्जुब नहीं मानव बुद्धि एक दिन अपने सेल के टेलोमेयर को भी बनाए रखने की क्षमता हासिल कर मनुष्य को अमर कर दे।

Date: 29-04-26

गेमिंग कम्पनियों पर लगाम के लिए कठोर दंड दंड क्यों नहीं?

विराग गुप्ता, (सुप्रीम कोर्ट के वकील)

दिल्ली में आईआरएस अधिकारी की बेटी के साथ दुष्कर्म और हत्या का आरोपी नौकर ऑनलाइन गेमिंग की लत की वजह से 7 लाख रुपये के कर्ज के जाल में फंस गया था। एम्स और इहबास के डॉक्टरों के अनुसार गेमिंग डिसऑर्डर और नशे के कॉम्बो से अवसाद, चोरी, धोखाधड़ी, पोर्नोग्राफी और दूसरे अपराध बढ़ रहे हैं ऑनलाइन गेमिंग की महामारी से लोगों को बचाने के लिए पिछले साल संसद से कानून बना था। उसके अनुसार 1 मई से नए नियम लागू होंगे। लेकिन इनसे भी ऑनलाइन जुए और सट्टेबाजी का मर्ज खत्म नहीं होगा। इससे जुड़े 5 पहलुओं को समझना जरूरी है :

1. संविधान की सातवीं अनुसूची के अनुसार सट्टेबाजी और जुए को रोकने हेतु कानून बनाने के लिए केंद्र के पास अधिकार ही नहीं हैं। केंद्र सरकार ने अगस्त 2021 में दिल्ली हाईकोर्ट में कहा था कि इस बारे में कानून बनाने का अधिकार राज्य सरकारों के पास है। तेलंगाना, तमिलनाडु, कर्नाटक, छत्तीसगढ़ और राजस्थान ने इस मर्ज पर लगाम कसने के लिए कानून बनाने की पहल की थी। राज्यों के साथ मिलकर युवाओं को गेमिंग के मर्ज से निजात दिलाने के बजाय आईटी रूल्स में बदलाव और एडवाइजरी के बहाने केंद्र सरकार उलटे गेमिंग कम्पनियों के कारोबार को बढ़ावा दे रही है।

2. 2022 में एडवरटाइजिंग स्टैंडर्ड काउंसिल ऑफ इंडिया ने 18 से कम उम्र के बच्चों के संबंध में एडवाइजरी जारी की थी। लेकिन नए नियमों में बच्चों को पैसे के लेन-देन वाले गेम्स से दूर रखने के बारे में स्पष्ट प्रावधान नही हैं। 2023 में संसद से पारित डीपीडीपी कानून के अनुसार गेमिंग कम्पनियां बच्चों के डेटा का व्यावसायिक इस्तेमाल नहीं कर सकतीं। लेकिन उन्हें लागू करने के लिए नए नियमों में कोई व्यवस्था नहीं है।

3. डेटा को विदेश जाने से रोकने और राष्ट्रीय सुरक्षा को बढ़ाने के लिए 2020 में टिकटॉक और पबजी जैसे 177 चीनी एप्स पर सरकार ने प्रतिबंध लगाया था। ईडी जांच में चीनी गेमिंग एप के म्यूल खातों से साइबर अपराधों को बढ़ावा देने और क्रिप्टो के जरिये खरबों के हवाला लेन-देन का खुलासा हुआ था। गेमिंग चैट से युवाओं को कट्टरपंथ और आतंकवाद से जोड़ा जा रहा है। गेमिंग कम्पनियों के आपराधिक तंत्र पर लगाम के लिए इन नियमों में कठोर दंड का प्रावधान नहीं है।

4. विदेशों से संचालित हो रही गेमिंग कम्पनियां खरबों का गैर-कानूनी कारोबार करने के साथ बड़े पैमाने पर टैक्स चोरी कर रही हैं। प्राइज मनी पर 58 हजार करोड़ की आयकर चोरी और 2.50 लाख करोड़ की जीएसटी चोरी के मामले अदालतों में लम्बित हैं। कौशल आधारित खेलों के पुराने वर्गीकरण को समाप्त करके ई-स्पोर्ट्स की आड़ में मनी गेमिंग एप्स को बढ़ावा दिया जा रहा है। इन विरोधाभासों और कानूनी बारीकियों का लाभ उठाकर गेमिंग कम्पनियां खरबों टैक्स भुगतान से बचने का यत्न कर सकती हैं।

5. सरकार के पीआईबी नोट में ऑनलाइन सट्टेबाजी, जुआ, लॉटरी, फैंटसी स्पोर्ट्स, पोकर और रमी जैसे कार्ड गेम पर रोक लगाने का दावा किया गया था। नए नियमों में रियल मनी गेमिंग पर प्रतिबंध की गोल-मोल बात की गई है। सवाल यह है कि नए नियमों से ऑनलाइन सट्टेबाजी और गैम्बलिंग पर प्रतिबंध लगा है या नहीं? अगर प्रतिबंध नहीं लगा तो सरकार राज्यों के साथ मिलकर प्रभावी कानून क्यों नहीं बनाती ? अगर लगा है तो बताना चाहिए कि राज्यों से जुड़े विषय पर केंद्र ने किस संवैधानिक हक से कानून बनाया है?

विधि आयोग ने कहा था कि अगर सख्त कानून होता तो युधिष्ठिर भी अपने भाइयों और पत्नी को दांव पर नहीं लगाते। सोशल गेम और ई-स्पोर्ट्स की आड़ में मनी गेमिंग और सट्टेबाजी के मर्ज को कानूनी बढ़ावा देने से बच्चों का भविष्य दांव पर लगने के साथ अर्थव्यवस्था की नींव कमजोर हो सकती है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 29-04-26

सीपीटीपीपी पर हो पुनर्विचार

संपादकीय

भारत की विदेश व्यापार नीति का नए सिरे से संतुलन जारी है। इस सप्ताह न्यूजीलैंड के साथ मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) पर हस्ताक्षर किए गए। इसके तहत, जहां सभी भारतीय वस्तुओं को न्यूजीलैंड के बाजार में शुल्क-मुक्त प्रवेश मिलेगा, वहीं भारत के आयात का एक बड़ा हिस्सा भी खोला जाएगा, जिसमें कुछ श्रेणियों की वस्तुओं पर महत्त्वपूर्ण शुल्क कटौती या विस्तारित कोटा लागू होंगे। इनमें न्यूजीलैंड के लिए महत्त्वपूर्ण कृषि उत्पाद जैसे भेड़ का मांस और कीवी फल शामिल हैं।

भारत ने इस समझौते के शुल्क कटौती वाले हिस्से में इस पर जोर दिया है कि कुछ क्षेत्रों को सुरक्षित रखा गया है। हालांकि, वास्तविक अपवाद केवल डेरी क्षेत्र है, जिसमें न्यूजीलैंड अत्यधिक प्रतिस्पर्धी है। भारत में डेरी क्षेत्र राजनीतिक रूप से संवेदनशील है क्योंकि इसमें करोड़ों लोगों की आजीविकाएं जुड़ी हुई हैं, और यही कारण है कि हाल के सभी व्यापार समझौतों में इसे उचित रूप से संरक्षित किया गया है।

यूरोपीय संघ की तुलना में न्यूजीलैंड एक छोटा और अधिक चुस्त व्यापारिक इकाई है, इसलिए वह ऐसे समझौते कर सका जो भारत के लिए मुक्त व्यापार समझौते को अधिक आकर्षक बनाते हैं। उदाहरण के लिए, उसने अगले 15 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में 20 अरब डॉलर निवेश करने का वादा किया है। यह संभव होगा या नहीं, यह एक अलग प्रश्न है। इसी तरह का वादा यूरोपीय मुक्त व्यापार क्षेत्र (ईएफटीए) के देशों-नॉर्वे, स्विट्जरलैंड, आइसलैंड और लिकटेनस्टाइन ने किया था, लेकिन वह 100 अरब डॉलर का था। भारत ने अक्सर निवेश को व्यापारिक उदारीकरण का दूसरा पहलू माना है और इसीलिए उसने बाजार तक पहुंच को ऐसे वादों पर आधारित किया है। हालांकि इतने बड़े निवेश को साकार करने के लिए भारत को व्यवसाय और निवेशक-हितैषी सुधारों को आगे बढ़ाते रहना होगा। इसलिए न्यायिक और मध्यस्थता सुधार एक प्रमुख प्राथमिकता होने चाहिए ताकि विवाद निपटान से जुड़ी चिंताएं वादा किए गए पूंजी प्रवाह में बाधा न डालें।

इस समझौते में व्यक्तियों की आवाजाही से संबंधित कुछ प्रावधान भी शामिल हैं, जो अपेक्षाकृत दुर्लभ हैं, खासकर उस समय जब कई देश आव्रजन के प्रति अधिक सख्त हो रहे हैं। न्यूजीलैंड में 5,000 भारतीय पेशेवरों को तीन-वर्षीय कार्य परमिट दिए जाएंगे, विशेष रूप से स्वास्थ्य सेवा और सूचना प्रौद्योगिकी जैसे मांग वाले क्षेत्रों में। भारत लंबे समय से चाहता रहा है कि प्रवासन समझौते व्यापक व्यापार समझौतों का हिस्सा हों, लेकिन हाल के समझौतों में जैसे ब्रिटेन और यूरोपीय संघ के साथ के समझौतों में इस जरूरत को राजनीतिक माहौल के कारण स्थगित करना पड़ा। स्पष्ट है कि न्यूजीलैंड में यह अभी उतना बड़ा मुद्दा नहीं है लेकिन इसे सावधानीपूर्वक देखना होगा, क्योंकि ऐसे मुद्दों पर घरेलू राजनीति कुछ ही वर्षों में तेजी से बदल सकती है।

न्यूजीलैंड व्यापक एवं प्रगतिशील प्रशांत पार साझेदारी समझौते (सीपीटीपीपी) का पूर्ण सदस्य है। इस गठबंधन के 12 सदस्य ऑस्ट्रेलिया, ब्रुनेई, कनाडा, चिली, जापान, मलेशिया, मेक्सिको, न्यूज़ीलैंड, पेरू, सिंगापुर, वियतनाम और ब्रिटेन हैं। इनमें से अब आठ देशों के साथ भारत मुक्त व्यापार समझौता कर चुका है। इस महीने की शुरुआत में, कनाडा के प्रधानमंत्री मार्क कार्नी की आधिकारिक यात्रा के साथ, कनाडा के साथ वार्ताएं फिर से शुरू हुईं।

अब इस पर पुनर्विचार करना महत्त्वपूर्ण है कि क्या सीपीटीपीपी की सदस्यता के लिए आधिकारिक रूप से आवेदन करना समझदारी होगी। यह एक मानक व्यापार समझौता है, जो निवेशकों और व्यापारियों के लिए भरोसे के स्तर को उल्लेखनीय रूप से बढ़ा देगा। यह वर्तमान वैश्विक शासन में हो रहे व्यवधानों के लिए उपयुक्त भू-राजनीतिक और भू-आर्थिक प्रतिक्रिया भी होगी। भारत ने यूरोपीय संघ सहित कई देशों और व्यापारिक समूहों के साथ मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर करने में उल्लेखनीय खुलापन दिखाया है, और यह महत्त्वपूर्ण है कि इस गति को बनाए रखा जाए। भारत को अपनी औसत शुल्क दरों को भी कम करने पर विचार करना चाहिए, जो अन्य बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के साथ तालमेल में नहीं हैं।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 29-04-26

पानी के लिए मरते लोग

संपादकीय

अफ्रीकी देश चाड में पानी के लिए दो समूहों के बीच हुई हिंसक लड़ाई में चालीस से अधिक लोगों की मौत दुखद तो है ही, दुनिया को आगाह करने वाली भी है। जैसे कि ब्योरे हैं, चाड के वादी फिरा प्रांत में एक जल-स्रोत पर कब्जे को लेकर शुरू हुई झड़प देखते-देखते हिंसक प्रतिशोध में बदल गई और लाशों का ढेर लगता गया। पहली नजर में यह लग सकता है कि चाड एक नाकाम मुल्क है, जहां व्यवस्था काम नहीं करती है। उसका समाज इस दौर में भी इंसानी जान की अहमियत नहीं समझ सका है, मगर बात इतनी ही नहीं है। अनाज व जल इंसान के अस्तित्व की दो मूल अनिवार्यताएं हैं और अनिवार्यता का कोई विकल्प नहीं होता। ठीक वैसे ही, जैसे सांस का कोई विकल्प नहीं है। इसलिए, इस घटना को बर्बर समाजों के मूढ़तापूर्ण कृत्य के रूप में देखना आसन्न विपत्ति से मुंह मोड़ना कहलाएगा। चाड में वैसे भी पानी का जबर्दस्त संकट है और वहां की लगभग आधी आबादी पेयजल के संकट से जूझती रही है। चूंकि पड़ोसी देश सूडान के गृहयुद्ध से त्रस्त लोग बड़ी संख्या में भागकर चाड पहुंचते रहे हैं, इसलिए उसके संसाधनों पर लगातार दबाव बढ़ रहा है।

आज से करीब तीन दशक पहले संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव बुतरस बुतरस घाली ने कहा था कि तीसरा विश्व युद्ध पानी के लिए हो सकता है। तभी अगर दुनिया ने इसका समुचित संज्ञान लिया होता, तो मौजूदा महासचिव एंटोनियो गुटेरस को आज यह गुहार लगाने की नौबत नहीं आती कि स्वच्छ पेयजल के अभाव में हर साल चौदह लाख से अधिक लोग दुनिया भर में मौत के शिकार हो जाते हैं, इसलिए सरकारें जल संसाधन में निवेश करें। दरअसल, यह निवेश अपने देश के भविष्य में निवेश है। विश्व बैंक भी अपने एक अध्ययन के आधार पर यह दावा कर चुका है कि पानी की कमी और सूखे के कारण साल 2030 तक संसार भर में लगभग सात करोड़ लोगों पर विस्थापन का खतरा मंडरा रहा है। अगर ऐसा हुआ, तो यह आबादी जहां-जहां पहुंचेगी, क्या वहां के उपलब्ध जल-संसाधनों पर दबाव नहीं बनेगा? धरती पर मीठे जल का भंडार वैसे ही बहुत कम है, वह भी ज्यादातर ग्लेशियर की बर्फ के रूप में है। जलवायु परिवर्तन का असर अब वैज्ञानिक विमर्शों से निकलकर आम आदमी के एहसास का हिस्सा बन चुका है। मौसम चक्र में तेज बदलाव हर कोई महसूस कर रहा है। इसके बाद भी यदि गफलत का आलम बना रहा, तो चाड जैसी घटनाएं नाकाम मुल्कों तक महदूद नहीं रहेंगी। इसकी चपेट में तरक्की का दावा करने वाले देश भी आ सकते हैं।

चाड जैसी घटनाओं से भारत के नीति-निर्धारकों को सबक सीखने की जरूरत है। तब तो और, जब हमारे कई महानगर व बड़े शहर गर्मियों में पानी की किल्लत से जूझने लगे हैं। राजधानी दिल्ली में ही हर गर्मी में पानी के लिए कच्ची कॉलोनियों में लड़ाई-झगड़े की खबरें छपती रहती हैं। जाहिर है, आने वाले समय में तमाम बड़े शहरों पर जनसंख्या का दबाव बढ़ेगा। ऐसे में, पहले से ही संसाधनों की कमी से जूझ रही शहरी आबादी की सुविधाएं इससे प्रभावित होंगी। इसलिए स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति ही नहीं, जल-स्रोतों के संरक्षण व नदियों को प्रदूषण मुक्त बनाने को लेकर हमें गंभीर होने की जरूरत है। निस्संदेह, यह काम सिर्फ सरकार के बूते संभव नहीं, नागरिक समाज को भी अपनी संततियों के बारे में सोचना होगा। हमें अपने जल-स्रोतों को नष्ट होने से बचाना होगा, वरना सामाजिक टकराव को टाला नहीं जा सकता।

Date: 29-04-26

न्यायिक मर्यादा पर कोई आंच न आए

फैजान मुस्तफा, (कुलपति, चाणक्य राष्ट्रीय विधि विवि)

हर इंसान को यह हक है कि वह खुद को निष्पक्ष और पूर्वाग्रह-रहित माने, किंतु न्यायिक प्रक्रिया में जजों को यह विशेषाधिकार हासिल नहीं होता। यहां उनके खुद के आकलन को नहीं, दूसरों द्वारा उनकी निष्पक्षता और तटस्थता के मूल्यांकन को अहम माना जाता है। अफसोस! एक न्यायमूर्ति न्यायिक मर्यादा के इस बुनियादी नियम की अनदेखी करती लग रही हैं।

हर जगह चर्चा यही है कि याचिकाकर्ता (अरविंद केजरीवाल) और न्यायाधीश (न्यायमूर्ति स्वर्णकांता शर्मा), दोनों ने अपने व्यवहार से भारतीय न्याय-व्यवस्था की छवि धूमिल की है। क्या उन्होंने जान-बूझकर न्यायिक उद्देश्य के बजाय अपने अहं को अधिक महत्व दिया है? न्यायाधीश से इस केस को छोड़ने की याचिकाकर्ता की गुजारिश एक सामान्य प्रक्रिया थी, पर खुद जिरह करके याचिकाकर्ता ने सुर्खियां बटोरने का प्रयास किया।

अरविंद केजरीवाल के तर्कों में ऐसा कुछ नहीं था, जिसे उनका प्रतिनिधित्व करने वाला वकील न रख पाता। इसी तरह, न्यायाधीश भी खुद को इस मुकदमे से अलग कर सकती थीं, जिससे विवाद वहीं खत्म हो जाता। इससे उनके बच्चों के सरकारी पैनल में शामिल होने या मुकदमों के आंवटन को लेकर हो रही बेवजह की बहसबाजी नहीं होती, मगर संबंधित जज ने इसको व्यक्तिगत रूप से लिया और केस न छोड़ने की जिद से अपनी प्रतिष्ठा को कहीं अधिक नुकसान पहुंचाया।

दिलचस्प बात यह है कि हाल ही में उन्होंने आम आदमी पार्टी के एक पूर्व विधायक नरेश बलियान के मकोका मामले से खुद को अलग कर लिया था। उन्होंने स्वयं 'आप' नेता सत्येंद्र जैन मामले में ईडी की याचिका सुनने वाली निचली अदालत के न्यायाधीश को बदलने का आदेश दिया था। वहीं, केजरीवाल के 25 बिंदुओं वाले लंबे पत्र ने स्थिति और बिगाड़ दी है। यह चिंताजनक प्रवृत्ति है, क्योंकि चिट्ठी कार्यपालिका को लिखी जाती है, न्यायाधीश को नहीं। बेशक, अदालत द्वारा उन्हें पेश होने के लिए बाध्य किया जा सकता है या उन्हें 'एमिकस' (न्यायालय मित्र) दिया जा सकता है, पर यह न्यायाधीश के लिए पेचीदा स्थिति है, क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 22 (1) के तहत 'आरोपी को अपनी पसंद का वकील' चुनने का प्रावधान है। अभियुक्त यदि इसी तरह एकतरफा आपराधिक दोष-सिद्धि की मांग करने लगे, तो हमारी न्याय-व्यवस्था पर सवाल भी उठने शुरू हो जाएंगे।

बहरहाल, ताजा विवाद एक न्यायाधीश द्वारा खुद केस छोड़ने से जुड़ा है, इसलिए यहां पूर्व के विवादों और इससे जुड़े कानूनों को याद करना उचित होगा। वास्तव में, मुकदमों से खुद को अलग करने के संबंध में न्यायाधीशों का रुख हाल-फिलहाल में विरोधाभासी रहा है। ऐसा प्रशासनिक व न्यायिक, दोनों ही मामलों में देखा गया है। मसलन, एक कुलपति द्वारा खुद को उस समिति से अलग न करने को कानूनन गलत नहीं माना गया, जिसने उसकी पत्नी को कुलपति के रूप में चुना था और वह स्वयं उसकी अध्यक्षता कर रहे थे। वहीं न्यायिक क्षेत्र में देखें, तो मानवाधिकार कार्यकर्ता गौतम नवलखा से जुड़े मामलों की सुनवाई से न्यायाधीशों को अलग होने का अनुरोध नहीं किया गया था, फिर भी उन्होंने वह केस छोड़ दिया। अलग होने वाले पांच न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय के थे, जिनमें से तीन- न्यायमूर्ति रंजन गागोई, न्यायमूर्ति एनवी रमना और न्यायमूर्ति बीआर गवई तो बाद में प्रधान न्यायाधीश बने, जबकि शेष दो न्यायाधीश थे- न्यायमूर्ति रवींद्र भट्ट और न्यायमूर्ति आर सुभाष रेड्डी। हालांकि, उन्होंने इसकी वजह नहीं बताई। एक अन्य हाई-प्रोफाइल मामले में न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा ने कुछ पक्षों के अनुरोध के बावजूद केस छोड़ने से इनकार कर दिया था, जबकि उन्हीं के फैसले की समीक्षा बड़ी पीठ कर रही थी।

न्याय का तकाजा यही है कि न्यायाधीश निष्पक्ष दिखें। जब उनकी निष्पक्षता पर संदेह होता है, तभी उनसे मामले से अलग होने की मांग की जाती है। बेशक, इन शंकाओं के सुबूत की जरूरत नहीं होती, जैसा आमतौर पर आपराधिक मामलों में देखा जाता है, पर संबंधित न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता से बड़े सुबूत की मांग करके शायद विवाद को बढ़ने दिया। न्यायाधीश का कर्तव्य यह है कि वह अन्याय की किसी भी भावना और पक्षपात की आशंका को दूर करे।

यहां यह उल्लेख उचित होगा कि सर निकोलस बेकन (1563) मामले में कहा गया था, न्यायाधीश से यह अपेक्षा की जाती है कि यदि किसी मुकदमे में उसका 'प्रत्यक्ष आर्थिक हित' हो, तो वह खुद को उस मामले से अलग कर ले। संबंधित न्यायमूर्ति के परिजन को 2023 से 2025 के बीच आवंटित 5,904 मुकदमों से प्राप्त लाभ भले 'आर्थिक लाभ' की कसौटी पर पूरी तरह खरा न उतर रहा हो, लेकिन यह संदेह पैदा करने के लिए पर्याप्त है। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति आर वी रविधरन ने साल 2009 में केजी बेसिन मामले में अंबानी बंधुओं के खिलाफ चल रहे एक

मुकदमे से खुद को अलग कर लिया था, क्योंकि उनकी बेटी उस लॉ फर्म में काम कर रही थीं, जो एक पक्ष को कानूनी सलाह दे रही थी।

कोई भी तरफदारी फैसले को प्रभावित करती है और इस मामले में दुर्योग से न्यायमूर्ति का 'झुकाव' ही केंद्र में आ गया। निस्संदेह, संबंधित न्यायमूर्ति निष्पक्ष निर्णय देंगी, लेकिन उस फैसले की वैधता पर सवाल फिर भी उठेंगे। इतना ही नहीं, उनके द्वारा खुद को इस मामले से अलग न करने से न्यायपालिका की निष्पक्षता पर लोगों का भरोसा डगमगा सकता है, क्योंकि सामान्य नियम यही कहता है कि न्यायाधीश को अपनी निष्पक्षता के बारे में किसी भी संदेह को दूर करना चाहिए। उधर, याचिकाकर्ता पूर्व मुख्यमंत्री के साथ काम कर चुके कई लोग मानते हैं कि आम आदमी पार्टी के नेता ऐसा जज चाहते हैं, जो उनका हितैषी हो। याचिकाकर्ता इस धारणा को दूर करने में विफल रहे हैं।

न्यायिक गलियारे में यही माना जा रहा है कि बतौर हाईकोर्ट न्यायमूर्ति संबंधित न्यायाधीश रंजीत ठाकुर (1987) मामले में दिए गए सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति एम एन वेंकटचलैया के फैसले का पालन करने को बाध्य थीं। उस ऐतिहासिक फैसले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था, 'पक्षपात की आशंका को जांचने के दौरान प्रासंगिक बात यही है कि पक्षकार की आशंका कितनी तर्कसंगत है। लिहाजा, न्यायाधीश के लिए उचित यही है कि वह अपना आकलन खुद नहीं, बल्कि पक्षकार की नजर से करे'।